मधुरिमा

महेन्द्र भटनागर

●

साहित्य प्रकाशन मन्दिर
हाईकोर्ट रोड,
लश्कर, ग्वालियर

प्रकाशक
साहित्य प्रकाशन मंदिर
हाई कोर्ट रोड
लश्कर, ग्वालियर

मूल्य
तीन रुपये

मुद्रक
भास्कर मुद्रणालय
आगरा ।

दो-शब्द

'मधुरिमा' के गीत वैयक्तिक जीवन से संबंध रखते हैं। वैयक्तिकता जीवन का महत्वपूर्ण पहलू है। मनुष्य का जीवन व्यष्टि और समष्टि की परिधि में आबद्ध है। दोनों में से किसी का भी अस्तित्व अस्वीकार नहीं किया जा सकता। पर, वैयक्तिकता सामाजिक-पक्ष के समान उपादेय नहीं मानी जा सकती और एकांत वैयक्तिकता तो समाज-विरोधी तत्त्व ही समझी जायगी। ऐसी स्थिति में वैयक्तिक भावनाओं की अभिव्यक्ति की एक सीमा होती है; उसका अतिक्रमण सामाजिक दृष्टि से वांछनीय नहीं। इसी कारण वैयक्तिक जीवन की प्रत्येक अनुभूति को काव्य में नहीं उतारा जाना चाहिए। यदि अनुभूतियों की कहीं अनपेक्षित अभिव्यक्ति दिखाई दे तो उसे भावातिरेक की अवस्था ही नहीं कवि की दुर्बलता भी समझी जाय।

जीवन में प्रेम और प्रणय का महत्वपूर्ण स्थान है; माना कि प्रेम और प्रणय ही सब कुछ नहीं है। एक अवस्था विशेष पर प्रेम और प्रणय की भावनाएँ प्रत्येक के मानस पर छा जाती हैं—यह तथ्य मनु और श्रद्धा से लेकर आजतक और भविष्य में प्रलय-काल तक कहीं भी झुठलाया नहीं जा सकता। प्रेम और प्रणय की भावनाएँ अपने स्वस्थ रूप में व्यक्ति और समाज के लिए शिव हैं। 'मधुरिमा' के गीतों से यदि भावुक और स्वस्थ व्यक्तियों के हृदय सहज तादात्म्य स्थापित करते हैं तो उनकी उपादेयता स्वयंसिद्ध है। जहाँ तक मेरा संबंध है मुझे इन गीतों से मोह भी है और विरक्ति भी।

रामकुंज
विश्वविद्यालय-मार्ग
उज्जैन

—महेन्द्र भटनागर

क्रम	गीत		पृष्ठ
१.	आदमी	....	१
२.	कौन हो तुम	....	२
३.	तुम	....	४
४.	दर्शन	....	५
५.	मत बनो कठोर	....	७
६.	किरण	....	९
७.	चाँद से	....	१०
८.	चाँद सोता है	....	१२
९.	कौन कहता है	....	१४
१०.	शिशिर की रात [१]	....	१६
११.	शिशिर की रात [२]	....	१८
१२.	बसंत	....	२०
१३.	छा गए बादल	....	२१
१४.	आ गया सावन	....	२३
१५.	बरखा की रात	....	२५
१६.	मेघ और शशि	....	२७
१७.	निवेदन	....	२९
१८.	चाँदनी में	....	३१
१९.	ज्योत्सना	....	३३
२०.	चाँद और तुम	....	३४
२१	बुरा क्या किया था	....	३६
२२.	कल रात	....	३८
२३.	जाओ नहीं	....	४०
२४.	विश्वास	....	४२
२५.	प्रतीक्षा	....	४४
२६.	कोई शिकायत नहीं	....	४५
२७.	विरह का गान	....	४७
२८.	दीप जला दो	....	४९
२९.	धन्यवाद	....	५१

क्रम	गीत		पृष्ठ
३०.	नींद	....	५३
३१.	पूनम	....	५५
३२.	झलकता रूप	....	५६
३३.	समर्पण	....	५७
३४.	बड़ा कठिन	....	५८
३५.	कलानिधि	....	५६
३६.	आकुल-अंतर	....	६०
३७.	मेरा चांद....	....	६१
३८.	अमावस की अंधेरी में	....	६२
३६.	मिल गये थे हम	....	६३
४०.	ग्रहण	....	६४
४१.	विवशता	....	६५
४२.	ओ चांद	....	६६
४३.	आकर्षण	....	६८
४४.	मृग-तृष्णा	....	७०
४५.	चांद और पत्थर [१]	....	७१
४६.	चांद और पत्थर [२]	....	७३
४७.	न जाने क्यों....	....	७४
४८.	स्मृति की रेखाएं	....	७६
४६.	साथ	....	७८
५०.	चांद, मेरे प्यार	....	८०
५१.	दुराव	....	८२
५२.	यह न समझो	....	८३
५३.	तमसे मिलना तो	....	८५
५४.	आत्म स्वीकृति	....	८६
५५.	प्रेय	....	८८

जीवन सहचरी को

आदमी

१

गोद पाकर, कौन जो सोया नहीं ?
होश किसने प्यार में खोया नहीं ?
आदमी, पर है वही जो दर्द को
प्राण में रख, एक पल रोया नहीं !

१९५७

कौन हो तुम

२

कौन हो तुम, चिर-प्रतीक्षा-रत
सजग, आधी अँधेरी रात में ?

उड़ रहे हैं घन तिमिर के
सृष्टि के इस छोर से उस छोर तक,
मूक इस वातावरण को
देखते नभ के सितारे एकटक,

कौन हो तुम, जागतीं जो इन
सितारों के घने संघात में ?
कौन हो तुम, चिर-प्रतीक्षा-रत
सजग, आधी अँधेरी रात में ?

जल रहा यह दीप किसका,
ज्योति अभिनव ले कुटी के द्वार पर,
पंथ पर आलोक अपना
दूर तक बिखरा रहा विस्तार भर,

कौन है यह दीप ? जलता जो
अकेला, तीव्र गतिमय वात में ?
कौन हो तुम, चिर-प्रतीक्षा-रत
सजग, आधी अँधेरी रात में ?

कर रहा है आज कोई
वार-वार प्रहार मन की बीन पर,
स्नेह काले लोचनों से
युग-कपोलों पर रहा रह-रह बिखर,

कौन-सी ऐसी व्यथा है,
रात में जगते हुए जलजात में ?
कौन हो तुम, चिर-प्रतीक्षा-रत
सजग, आधी अँधेरी रात में ?

१६४८

तुम

३

सचमुच, तुम कितनी भोली हो !

संकेत तुम्हारे नहीं समझ में आते,
मधु-भाव हृदय के ज्ञात नहीं हो पाते,

तुमतो अपने में ही डूबी
नभ-परियों की हमजोली हो !
सचमुच, तुम कितनी भोली हो !

तुम एक घड़ी भी ठहर नहीं पाती हो,
फिर भी जाने क्यों मन में बस जाती हो,

वायु बसंती बन मंथर-गति
से जंगल-जंगल डोली हो !
सचमुच, तुम कितनी भोली हो !

१९५५

दर्शन

४

मन दर्शन करने से बंधन में बँध जाता है !

यह दर्शन सपनों में भी कर
देता सोये उर को चंचल,
लखकर शीशे-सी नव आभा
आँखें पड़ती हैं फिसल-फिसल,
नयनों का घूँघट गिर जाता, मन भर आता है !
मन दर्शन करने से बंधन में बँध जाता है !

यह दर्शन केवल क्षण भर का
बिखरा देता भोली शबनम,
बन जाता है त्योहार सजल
पीड़ामय सिसकी का मातम,
इसका वेग प्रखर आँधी से होड़ लगाता है !
मन दर्शन करने से बंधन में बँध जाता है !

यह दर्शन उज्वल स्मृति में ही
देता अंतर के तार हिला,
नीरस जीवन के उपवन में
देता है अनगिन फूल खिला,
इसका कंपन मीठा-मीठा गीत सुनाता है!
मन दर्शन करने से बंधन में बँध जाता है!

यह दर्शन प्रतिदिन-प्रतिक्षण का
लगता न कभी उर को भारी,
दिन में सोने, निशि में चाँदी
की सजती रहती फुलवारी,
यह नयनों का जीवन सार्थक पूर्ण बनाता है!
मन दर्शन करने से बंधन में बँध जाता है!

यह दर्शन मूक लकीरों का
बरसा देता सावन के घन,
गहरे काले तम के पट पर
खिंच जाती बिजली की तड़पन,
इसका आना उर-घाटी में ज्योति जगाता है!
मन दर्शन करने से बंधन में बँध जाता है!

१९५०

मत बनो कठोर

५

इन बड़री-बड़री अँखियों से
मत देखो प्रिय ! यों मेरी ओर !

इतने आकर्षण की छाया
जल-से अंतर पर मत डालो,
मैं पैरों पड़ता हूँ, अपनी
रूप-प्रभा को दूर हटालो,

अथवा युग नयनों में भर लो
फेंक रेशमी किरनों की डोर !
इन बड़री-बड़री अँखियों से
मत देखो प्रिय ! यों मेरी ओर !

और न मेरे मन की धरती
पर सुख-स्नेह-सुधा बरसाओ,
यह ठीक नहीं, वशमें करके
प्राणों को ऐसे तरसाओ,

छू लेने भर दो, कुसुमों से
अँकित जगमग आँचल का छोर !
इन बड़री-बड़री अँखियों से
मत देखो प्रिय ! यों मेरी ओर !

इस सुषमा की बरखा में तो
पथ भूल रहा है भीगा मन,
तुम उत्तरदायी, यदि सीमा
तोड़े यह उमड़ा नद-यौवन,

आ जाओ ना कुछ और निकट
यों इतनी तो मत बनो कठोर !
इन बड़री-बड़री अँखियों से
मत देखो प्रिय ! यों मेरी ओर !

१९५०

किरण

६

उतर रही प्रमोद से
अबोध चंद्र की किरण !

समस्त सृष्टि सुप्त देखकर,
रजत अरोक व्योम-मार्ग पर
समेट अंग – अंग
वेगवान रख रही चरण !
उतर रही प्रमोद से
अबोध चंद्र की किरण !

विमुक्त खूँदती रही निडर
हरेक गाँव, घर, गली, नगर,
न शांत रह सकी ज़रा
न कर सकी निशा-शयन !
उतर रही प्रमोद से
अबोध चंद्र की किरण !

·१९५२

चाँद से

७

कपोलों को तुम्हारे चूम लूँगा,
मुसकराओ ना !

तुम्हारे पास माना रूप का आगार है,
सुनयनों में बसा सुख-स्वप्न का संसार है,
अनावृत अप्सराएँ नृत्य करती हैं जहाँ,
नवेली तारिकाएँ ज्योति भरती हैं जहाँ,

उन्हीं के सामने जाओ; यहाँ पर,
झलमलाओ ना !
कपोलों को तुम्हारे चूम लूँगा,
मुसकराओ ना !

बड़ी खामोश ग्राहट है तुम्हारे पैर की
तभी तो चोर बनकर आसमाँ की सैर की,
खुली ज्यों ही पड़ी चादर सुनहली धूप की
न छिप पाई किरन कोई तुम्हारे रूप की,

बहाना अंग ढँकने का लचर इतना
बनाओ ना !
कपोलों को तुम्हारे चूम लूँगा
मुसकराओ ना !

युगों से देखता हूँ तुम बड़े ही मौन हो
बताओ तो ज़रा, मैं पूछता हूँ कौन हो ?
न पाओगे कभी जा दृष्टि से यों भाग कर
तुम्हारा धन गया है आज आँगन में बिखर ,

रुको पथ बीच, चुपके से मुझे उर में
बसाओ ना !
कपोलों को तुम्हारे चूम लूँगा
मुसकराओ ना !

१६५०

चाँद सोता है !

८

सितारों से सजी चादर
बिछाए चाँद सोता है !

बड़ा निश्चित है तन से,
बड़ा निश्चित है मन से,
बड़ा निश्चित जीवन से,

किसी के प्यार का आँचल
दबाए चाँद सोता है !
सितारों से सजी चादर
बिछाए चाँद सोता है !

नई सब भावनाएँ हैं,
नई सब कल्पनाएँ हैं,
नई सब वासनाएँ हैं,

हृदय में स्वप्न की दुनिया
बसाए चाँद सोता है!
सितारों से सजी चादर
बिछाए चाँद सोता है!

सुखद हर साँस है जिसकी,
मधुर हर श्रास है जिसकी,
सनातन प्यास है जिसकी,

विभा को वक्ष पर श्रपने
लिटाए चाँद सोता है!
सितारों से सजी चादर
बिछाए चाँद सोता है!

१६५३

६

कौन कहता है कि मेरे
चाँद में जीवन नहीं है ?

चाँद मेरा खूब हँसता, मुसकराता है,
खेलता है और फिर छिप दूर जाता है,
कौन कहता है कि मेरे
चाँद में धड़कन नहीं है ?
कौन कहता है कि मेरे
चाँद में जीवन नहीं है ?

रातभर यह भी किसी की याद करता है,
देखना, अक्सर विरह में आह भरता है,

कौन कहता है कि मेरे
चाँद में यौवन नहीं है ?
कौन कहता है कि मेरे
चाँद में जीवन नहीं है ?

है सदा करता रहा संसार को शीतल,
है सदा करता रहा वर्षा-सुधा अविरल,

कौन कहता है कि मेरे
चाँद में चन्दन नहीं है ?
कौन कहता है कि मेरे
चाँद में जीवन नहीं है ?

१६५४

शिशिर की रात [१]

१०

शिशिर-ऋतु-राज, राका-रश्मियाँ चंचल !

कि फैला दिग-दिगन्तों में सघन कुहरा,
सजल कण-कण कि मानों प्यार आ उतरा,
प्रकृति-संगीत-स्वर बस गूँजता अविरल !
शिशिर-ऋतु-राज, राका-रश्मियाँ चंचल !

शिथिल तरु-डाल, सम्पुट फूल-पाँखुड़ियाँ,
रहीं चुपचाप गिर ये ओस की लड़ियाँ,
धवल हैं सब दिशाएँ झूमती उज्वल !
शिशिर-ऋतु-राज, राका-रश्मियाँ चंचल !

गगन के वक्ष पर कुछ टिमटिमाते हैं,
सितारे जो नहीं फूले समाते हैं,
सुखद प्रत्येक उर है नृत्यमय-झलमल!
शिशिर-ऋतु-राज, राका-रश्मियाँ चंचल!

धरा आकाश एकाकार आलिंगन,
प्रणय के तार पर यौवन भरा गायन,
फिसलता नीलवर्णी शून्य में आँचल!
शिशिर-ऋतु-राज, राका-रश्मियाँ चंचल!

विहग तरु पर अकेला कूक देता है,
किसी की याद में बस हूक देता है,
नयन प्रिय-पंथ पर प्रतिपल बिछे निर्मल!
शिशिर-ऋतु-राज, राका-रश्मियाँ चंचल!

सबेरा है कहाँ? संसार सब सोया,
पवन सुनसान में बहता हुआ खोया,
अभी हैं स्वप्न के पल शेष कुछ कोमल!
शिशिर-ऋतु-राज, राका-रश्मियाँ चंचल!

१९४८

११

स्तब्ध, गीली, शुभ्र धुँधली रात है,
बह रहा शीतल शिशिर का वात है!

छा रहा कुहरा धुआँ-सा दूर तक,
छिप गया है चन्द्रमा का नूर तक!

हो गई फीकी नशीली ज्योत्सना,
व्योम मानों शीत का बंदी बना!

घोंसलों से मूक चिड़ियाँ झाँकतीं,
नींद में डूबी हुई कुछ आँकतीं!

शांत धरती पर खड़ीं ज्यों भित्तियाँ
जम गईं प्रत्येक तरु की पत्तियाँ !

आज चंचल धूल भी चुपचाप है,
उच्च टूटे शृंग पर हिमताप है !

बर्फ़ का तूफ़ान आएगा अभी,
श्वेत चादर-सी बिछाएगा अभी !

बन्द करलो ये झरोखे द्वार सब,
आज तो उमड़े हृदय का प्यार सब !

रात लम्बी है सबेरा दूर है,
क्या करें यह मन बड़ा मजबूर है !

इस तरह अब और शरमाओ नहीं,
पास आओ दूर यों जाओ नहीं !

रूठने का आज यह अवसर नहीं
ज़िन्दगी इस रात से बहतर नहीं !

१९४७

बसंत

१२

अंग – अंग में उमंग आज तो पिया,
बसंत आ गया!

दूर खेत मुसकरा रहे हरे – हरे,
डोलती बयार नव-सुगंध को धरे,
गा रहे विहग नवीन भावना भरे,
प्राण! आज तो विशुद्ध भाव प्यार का
हृदय समा गया!
अंग – अंग में उमंग आज तो पिया,
बसंत आ गया!

खिल गया अनेक फूल-पात से चमन;
झूम-झूम मौन गीत गा रहा गगन,
यह लजा रही उषा कि पर्व है मिलन,
आ गया समय बहार का, विहार का
नया नया नया!
अंग – अंग में उमंग आज तो पिया,
बसंत आ गया!

१९५३

१३

तुम्हारी मद भरी मुसकान लख कर आ गए बादल !
तुम्हारे नैन प्यासे देखकर ये छा गए बादल !

नवेली ! पायलों से बज रही झंकार है झन-झन ,
सदा यह झूमता प्रतिपल सुगढ़ सुन्दर सुकोमल तन ,
असह है यह तुम्हारे रूप का अब और आकर्षण ,
नयन बंदी हुए जिसको निमिष भर देखकर केवल !
तुम्हारे नैन प्यासे देखकर ये छा गए बादल !
तुम्हारी मद भरी मुसकान लख कर आ गए बादल !

चमकता शुभ्र गोरे-लाल फैले भाल पर झूमर,
तुम्हारे केश घुँघराले हवा में उड़ रहे फर-फर,
झुके जाते स्वयं के भार से प्रति अंग नव-सुन्दर,
फिसलता जा रहा है वक्ष पर से फूल-सा आँचल !
तुम्हारे नैन प्यासे देखकर ये छा गये बादल !
तुम्हारी मद भरी मुसकान लखकर आ गए बादल !

तुम्हारा गान सुन संसार सब बेहोश हो जाता,
बड़े सुख की नई दुनिया बसा निश्चित सो जाता,
तुम्हारी रागिनी में डूब मन-जलयान खो जाता,
बहाती हो अजानी स्नेह की धारा सरल छल-छल !
तुम्हारे नैन प्यासे देखकर ये छा गए बादल !
तुम्हारी मद भरी मुसकान लखकर आ गए बादल !

अमिट है याद से मेरी तुम्हारा वह मिलन-पनघट,
विकल होकर सुमुखि ! मैंने कहा जब, 'हो बड़ी नटखट !'
उसी पल खुल गया था यह तुम्हारी लाज का घूँघट ;
बड़े मनहर व मादक थे तुम्हारे बोल वे निश्छल !
तुम्हारे नैन प्यासे देखकर ये छा गए बादल !
तुम्हारी मद भरी मुसकान लखकर आ गए बादल !

१६४६

आ गया सावन

१४

प्रीति के प्रिय गीत गाओ !

आ गया सावन सजीवन ,
हैं बरसते प्यार के घन !

दूर खेतों में सरस सुन्दर
मुसकराती तृप्त हरियाली,
डाल पर कलियाँ हँसीं चंचल
छलछलाकर रस भरी प्याली,

तुम न जाओ दूर मुझसे
प्राण में आकर समाओ !
प्रीति के प्रिय गीत गाओ !

मधुरिमा

वायु शीतल बह रही है ,
कान में कुछ कह रही है !

स्वर मिलन - संगीत खग - उपवन,
भू - हृदय में हो रही धड़कन,
सब खिंचे जाते जगत के कण,
मूक मनहर सृष्टि - आकर्षण,

भावना ले द्रोह की तुम
यों विमुख होकर न जाओ !
प्रीति के प्रिय गीत गाओ !

१९४६

बरखा की रात

१५

दिशाएँ खो गईं तम में
धरा का व्योम से चुपचाप आलिंगन !

धरा ऐसी कि जिसने नव
सितारों से जड़ित साड़ी उतारी है,
सिहर कर गौर-वर्णी स्वस्थ
बाहें गोद में आने पसारी हैं,

समाई जा रही बनकर
सुहागिन, मुग्ध मन है और बेसुध तन !
दिशाएँ खो गईं तम में
धरा का व्योम से चुपचाप आलिंगन !

कि लहरों के उठे शीतल
उरोजों पर अजाना मन मचलता है,
चतुर्दिक घुल रहा उन्माद
छवि पर छा रही निश्छल सरलता है,

खिंचे जाते हृदय के तार
अगणित स्वर्ग-सम अविराम आकर्षण !
दिशाएँ खो गईं तम में
धरा का व्योम से चुपचाप आलिंगन !

बुझाने छटपटाती प्यास
युग-युग की, हुआ अनमोल यह संगम,
जलद नभ से विरह-ज्वाला
बुझाने को सघन होकर झरे झमझम,

निरन्तर बह रहा है स्रोत
जीवन का, उमड़ता आज है यौवन !
दिशाएँ खो गईं तम में
धरा का व्योम से चुपचाप आलिंगन !

१६४६

मेघ और शशि

१६

नभ में मेघों के टुकड़ों से
खेल रहा शशि आँख-मिचौनी !

शशि—सुन्दर, मोहक-आकर्षक
गोरे - गोरे अंगों वाला,
इतना तन्मय जाने क्यों, जब
मेघ—असुन्दर काला - काला ?

है क्या कोई जो बतलाए—
कैसे आज हुई अनहोनी !
नभ में मेघों के टुकड़ों से
खेल रहा शशि आँख-मिचौनी !

दौड़ रहे हैं दोनों अविरल,
पर ज्यों ही बादल हँसता है,
तब उन्मादी-सा शशि-घन की
युग बाहों में जा फँसता है,

कैसे कह सकता है कोई
किसको अपनी बाज़ी खोनी !
नभ में मेघों के टुकड़ों से
खेल रहा शशि आँख-मिचौनी !

दोनों ने भग कर चरणों से
लगभग नभ को नाप लिया है,
थोड़ा - थोड़ा दोनों ने ही
आज लिया है और दिया है,

रे रहे अजर शशि-घन की यह
युग-युग जोड़ी लोनी - लोनी !
नभ में मेघों के टुकड़ों से
खेल रहा शशि आँख-मिचौनी !

१९५४

१७

सुप्त उर के तार फिर से
प्राण ! आकर झनझना दो !

नभ - अवनि में शुभ्र फैली चाँदनी ,
मूक है खोई हुई - सी यामिनी ;
और कितनी तुम मनोहर कामिनी !

आज तो बन्दी बनाकर
क्षणिक उन्मादी बनादो !
सुप्त उर के तार फिर से
प्राण ! आकर झनझना दो !

मद भरे अरुणाभ हैं सुन्दर अधर,
नैन हिरनी से कहीं निश्छल सरल,
देह 'विद्युत, काँच, जल-सी' श्वेत है,
डालियों - सी बाहु मांसल तव नवल,

आज जीवन से भरा नव
गीत मीठा गुनगुना दो !
सुप्त उर के तार फिर से
प्राण ! आकर झनझना दो !

स्वर्ग से सुन्दर कहीं संसार है,
हर दिशा से हो रही झंकार है,
विश्व को यह प्रेम री स्वीकार है,

चिर - प्रतीक्षित - मधु - मिलन
त्योहार संगिनि ! अब मनालो !
सुप्त उर के तार फिर से
प्राण ! आकर झनझना दो !

१९४६

चाँदनी में

१८

नई चाँदनी में नहालो, नहालो !

नयन बंद कर आज सोए सितारे,
भगे जा रहे कुछ किनारे - किनारे,
खुले बंध मन के हमारे - तुम्हारे,
किरण-सेज पर प्रिय ! प्रणय-निशि मनालो !
नई चाँदनी में नहालो, नहालो !

झकोरे मिलन - गीत गाने लगे है,
मधुर - स्वर हृदय को हिलाने लगे हैं,
नए स्वप्न फिर आज छाने लगे हैं,
हँसो और संकोच - परदा हटालो !
नई चाँदनी में नहालो, नहालो !

जवानी लहर कर जगी मुसकराई,
सिमिटती बिखरती चली पास आई,
बड़े मान-मनुहार भी साथ लाई,
सुमुखि! अब स्वयं को न बरबस सँभालो!
नई चाँदनी में नहालो, नहालो!

भ्रमर को किसी ने गले से लगाया,
सरस-गंध मय अंक में भर सुलाया,
बड़े प्यार से चूम झूले झुलाया,
लजीलो! मुझे भी न बन्दी बनालो!
नई चाँदनी में नहालो, नहालो!

१९४८

ज्योत्सना

१६

मेरे पास यह आती हुई इतरा रही है ज्योत्सना,
मुझको देख एकाकी, सतत भरमा रही है ज्योत्सना!

धीरे से मुंडेरों पर उतरती आ रही है ज्योत्सना,
प्यारा और मीठा गीत, रानी गा रही है ज्योत्सना!

मेरे टीन पर, छत पर बिखर कर फैलती है ज्योत्सना,
मेरे हाथ से, मुख से निडर बन खेलती है ज्योत्सना!

सोने भी नहीं देती, स्वयं भी जागती है ज्योत्सना,
होती जब सुबह, जाने कहाँ जा भागती है ज्योत्सना!

मेरे से न जाने क्यों नहीं यह बोलती है ज्योत्सना,
प्राणों में अनोखा प्यार - अमृत घोलती है ज्योत्सना!

१६५४

चाँद और तुम

२०

अपनी छत पर खड़ी - खड़ी तुम
भी देख रही होगी चाँद !

शीतल किरनों की बरखा में
तुम भी आज नहाती होगी,
बड़री अँखियों से देख - देख
आकुल मन बहलाती होगी,
और अनायास कभी कुछ - कुछ
अस्फुट - स्वर में गाती होगी,
तुमको भी रह - रह कर आती
होगी आज किसी की याद !
अपनी छत पर खड़ी - खड़ी तुम
भी देख रही होगी चाँद !

अपने से ही मधु - बातें तुम
भी करने लग जाती होगी,
बाहें फैला अनजान किसी
को भरने लग जाती होगी,
फिर अपने इस पागलपन पर
अधरों में मुसकाती होगी,
तुममें भी उन मिलन - पलों का
छाया होगा री उन्माद !
अपनी छत पर खड़ी - खड़ी तुम
भी देख रही होगी चाँद !

तुमभी हलका करती होगी
यह भारी - भारी - सा जीवन,
तुम भी मुखरित करती होगी
यह सूना - सूना - सा यौवन,
खोई - खोई - सी व्याकुल बन
तुम चाह रही होगी बंधन,
तुमने भी इस पल सपनों की
दुनिया की होगी आबाद !
अपनी छत पर खड़ी - खड़ी तुम
भी देख रही होगी चाँद !

१९५१

बुरा क्या किया था ?

२१

मैंने, बताओ, तुम्हारा बुरा क्या किया था ?

कोमल कली - सी अधूरी खिली थीं,
जब तुम प्रथम भूल मुझसे मिली थीं,
अनुभव मुझे भी नया ही नया था,
पल भर सँभलना कठिन हो गया था,

अपना, तभी तो, सदा को तुम्हें कर लिया था !
मैंने, बताओ, तुम्हारा बुरा क्या किया था ?

जीवन - गगन में अँधेरी निशा थी,
दोनों भ्रमित थे कि खोई दिशा थी,
जब मैं अकेला खड़ा था विकल बन
पाया तुम्हें प्राण करते समर्पण,

उस क्षण युगों का जुड़ा प्यार सारा दिया था!
मैंने, बताओ, तुम्हारा बुरा क्या किया था?

तुमने उठा हाथ रोका नहीं था,
निश्चित थीं; क्योंकि धोखा नहीं था,
बंदी गईं बन बिना कुछ कहे ही
वरदान मानो मिला हो सदेही,

कितना सरल मूक अनजान पागल हिया था!
मैंने, बताओ, तुम्हारा बुरा क्या किया था?

१९५१

२२

कल रात ज़रा भी तो नींद नहीं आई !

सूनी कुटिया थी मेरी
सूना था नभ का आँगन,
केवल जगता था मैं, या
जगता विधु का भावुक मन;
प्रतिपल बढ़ती थीं ज्यों ही
जिसकी किरणें बाहें बन,
बढ़ती जाती थी रह-रह
जाग्रत अन्तर की धड़कन;

ना मद से बोझिल ये अँखियाँ अलसाईं !
कल रात ज़रा भी तो नींद नहीं आई !

स्वयं निकल कर स्वप्न - कथा
की बढ़ती थीं घटनाएँ,
उड़ जाती थीं शैया पर
नव - परिमल - ग्रन्ध - हवाएँ,
लहर - लहर कर ग्रँगड़ा कर
जागीं सुप्त भावनाएँ,
निशि भर पड़ी रहीं चुपचुप
मन को ग्रपने बहलाए,
उन्मादी-सी बन न क्षणिक भी शरमाईं !
कल रात ज़रा भी तो नींद नहीं ग्राई !

बिखर कभी कच वक्षस्थल
पर उड़ - उड़ लहराते थे,
या कि कभी सज-गुँथ कर दो
वेणी लट बन जाते थे,
कमल - वृंत पर कभी भ्रमर
ग्रस्फुट राग सुनाते थे,
कोमल पत्ते बार - बार
फूलों को सहलाते थे,
बनती मिटती रही ग्रजानी परछाईं !
सच, कल रात ज़रा भी नींद नहीं ग्राई !

१९५१

जाओ नहीं

२३

वीतते जाते पहर पर आ पहर
पर, रात ! तुम जाओ नहीं,
जाओ नहीं !

प्यार करता हूँ तुम्हें
तुम पूछ लो झिलमिल सितारों से
कि जागा हूँ
उनींदे नींद से बोझिल पलक ले ;
क्योंकि मेरी भावना
तव रूप में लय हो गई है !

मैं वही हूँ
एक दिन जिसको समर्पित था

किसी के रूप का धन
सामने तेरे !
तभी तो प्यार करता हूँ तुझे जी भर ,
कि तूने ज़िन्दगी के साथ मेरे
वह पिया है रूप का आसव
कि जिसका ही नशा
चहुँ ओर छाया दीखता है !

इसलिए—
ठहरो अभी, ओ रात !
तुम जाओ नहीं ,
जाओ नहीं !

१९४९

विश्वास

२४

यह विश्वास मुझे है—
एक दिवस तुम
मेरी प्यासी आँखों के सम्मुख
मधुघट लेकर आओगी!
बदली बनकर छाओगी!!
दरवाज़े को
गोरे-गोरे दर्पन-से हाथों से
खोल खड़ी हो जाओगी!
भोले लाल कपोलों पर
लज्जा के रँग भर-भर लाओगी!
नयनों की अनबोली भाषा में
जाने क्या-क्या कह जाओगी!

ज्यों चंदा को देख
चकोर विहँसने लगता है,
ज्यों ऊषा के आने पर

कमलों का दल खिलने लगता है,
वैसे ही देख तुम्हें कोई
चंचल हो जाएगा !
बीते मीठे सपनों की
दुनिया में खो जाएगा !
फिर इंगित से पास बुलाएगा,
धीरे से पूछेगा—
'कैसी हो'
'कब आई ?'
तुम क्या उत्तर दोगी ?
शायद, दो लम्बी आहें भर लोगी !
आँखों पर आँचल धर लोगी !!

१९५३

प्रतीक्षा

२५

आजतक मैंने तुम्हारी
चाहना का गीत गाया,
और रह-रह कर तड़पती
याद में जीवन बिताया,

क्या प्रतीक्षा में सदा ही
मैं व्यथा सहता रहूँगा?

स्वप्न में देखा कभी यदि,
कह उठा, 'बस आज आए'!
दिवस बीता, रात बीती
पर, न सुख के मेघ छाए,

कल्पना में ही सदा क्या
मैं विकल बहता रहूँगा?

प्राण उन्मन, भग्न जीवन,
मूक मेरी आज वाणी,
याद आती है विगत युग
की वही मीठी कहानी,

क्या अभावों की कथा ही
मैं सदा कहता रहूँगा?

१९४५

कोई शिकायत नहीं

२६

तुमसे मुझे आज कोई शिकायत नहीं है !

विवश बन, नयन भेद सारा छिपाए हुए हैं,
मिलन-चित्र मोहक हृदय में समाए हुए हैं,
बहुत सोचता हूँ, बहुत सोचता हूँ,
कहीं दूर का पथ नया खोजता हूँ,
पर, भूलने की शुभे ! एक आदत नहीं है !
तुमसे मुझे आज कोई शिकायत नहीं है !

कभी देख लेता मधुर स्वप्न जाने-अजाने,
उसी के नशे में तुम्हें पास लगता बुलाने,
बुरा क्या अगर मुसकराता रहूँ मैं !
नई एक दुनिया बसाता रहूँ मैं ?
सच, यह किसी भी तरह की शरारत नहीं है !
तुमसे मुझे आज कोई शिकायत नहीं है !

अकेली लता को कभी वृक्ष लेता लगा उर,
कमलिनी थकी-सी भ्रमर को सुखद अंक में भर,
सिमटती गई, चुप लजाती रही जब,
बड़ी याद मुझको सताती रही तब,
सौन्दर्य जग का किसी की अमानत नहीं है !
तुमसे मुझे आज कोई शिकायत नहीं है !

१९५०

विरह का गान

२७

मिल गया तुमको, तुम्हारा प्यार !

ज़िन्दगी मेरी अमा की रात है,
एक पश्चाताप की ही बात है,
आज मेरा घर हुआ वीरान है,
मूक होठों पर विरह का गान है;

पर, खुशी है—
मिल गया तुमको मधुर संसार !
मिल गया तुमको, तुम्हारा प्यार !

भाग्य में मेरे बदा था शून्य-जल
मधु-सुधा भी बन गया तीखा गरल,
पास की पहचान अब कड़ियाँ बनीं,
वेदनामय गत मिलन-घड़ियाँ बनीं,

पर, खुशी है—
मिल गया तुमको नया शृङ्गार!
मिल गया तुमको, तुम्हारा प्यार!

ज़िन्दगी में आँधियाँ ही आँधियाँ,
स्नेह बिन कबतक जलेगा यह दिया!
आ रहा बढ़ता भयावह ज्वार है
हाथ में आकर छिना पतवार है,

पर, खुशी है—
मिल गया तुमको सबल आधार!
मिल गया तुमको, तुम्हारा प्यार!

१९५१

दीप जला दो !

मेरे सूने घर में—
युग-युग का अँधियारा छाया है
जीवन-ज्योति जली थी—सपना है
तुममें जितना स्नेह समाया है
तब समझूँगा—मेरा अपना है

यदि ऊने अन्तर में तुम दीप जला दो !
मेरे सूने घर में तुम दीप जला दो !

कल्पों से यह जीवन क्या ?—मरुथल
बना हुआ है जग का ऊष्मा-घर
एकाकी पथ, फिर उस पर मृग-जल
तब मानूँगा तुममें रस-सागर

यदि मेरे ऊसर-मन को नहला दो !
मेरे सूने घर में तुम दीप जला दो !

पल-पल पर आना-जाना रहता
केवल रेतीले तूफानों का,
बनता क्या? जो है वह भी ढहता;
समझूँगा मूल्य तुम्हारे गानों का

यदि सूखे सर-से मन को बहला दो!
मेरे सूने घर में तुम दीप जला दो!

सम्भव हो न सकेगा जीवित रहना
पल भर भी तनमन—मोम लता का
है बस मूक प्रहारों को सहना;
समझूँगा जादू कोमलता का

यदि पाहन-उर के व्रण सहला दो!
मेरे सूने घर में तुम दीप जला दो!

१६५५

२६

दो क्षण सम्पुट अधरों को जो
तुमने दी खिलते शतदल-सी मुसकान ;
कृपा तुम्हारी, धन्यवाद !

जग की डाल-डाल पर छाया
था मधु-ऋतु का वैभव ,
वसुधा के कन-कन ने खेली
थी जब होली अभिनव ,
मेरे उर के मूक गगन को
गुंजित कर जो तुमने गाया मधु-गान ;
कृपा तुम्हारी, धन्यवाद !
दो क्षण सम्पुट अधरों को जो
तुमने दी खिलते शतदल-सी मुसकान ;
कृपा तुम्हारी, धन्यवाद !

पूनम की शीतल किरनों में
वन-प्रांतर डूब गए ,
जब जन-जन मन में सपनों के
जलते थे दीप नए ,
युग-युग के अंधकार में तुम
मेरे लाए जो जगमग स्वर्ण-विहान ;
कृपा तुम्हारी, धन्यवाद !

दो क्षण सम्पुट अधरों को जो
तुमने दी खिलते शतदल-सी मुसकान ;
कृपा तुम्हारी, धन्यवाद !

जब प्रणयोन्माद लिए बजती
मुरली मनुहारों की ,
घर-घर से प्रतिध्वनियाँ आतीं
गीतों - झनकारों की ,
दो क्षण को ही जो तुमने आ
बसा दिया मेरा अंतर-घर वीरान ;
कृपा तुम्हारी, धन्यवाद !

दो क्षण सम्पुट अधरों को जो
तुमने दी खिलते शतदल-सी मुसकान ;
कृपा तुम्हारी धन्यवाद !

आ जाती जीवन-प्यार लिए
जब संध्या की बेला ,
हर चौराहे पर लग जाता
अभिसारों का मेला ,
दुनिया के लांछन से सोया
जगा दिया खंडित फिर मेरा अभिमान ;
कृपा तुम्हारी धन्यवाद !

दो क्षण सम्पुट अधरों को जो
तुमने दी खिलते शतदल-सी मुसकान ;
कृपा तुम्हारी धन्यवाद !

१९५५

नींद

३०

आज मेरे लोचनों में
नींद घिरती आ रही है!

व्योम से आती हुई रजनी
मृदुल माँ-वत् करों से थपकियाँ देती,
नव-सितारों से जड़ित आँचल
बिछा है, आँख सुख की झपकियाँ लेतीं,

चंद्र-मुख से सित-सुधा की
धार झरती आ रही है!
आज मेरे लोचनों में
नींद घिरती आ रही है!

सुन रहा हूँ स्नेह का मधुमय
तुम्हारा गीत कुसुमों और डालों से
प्रति-ध्वनित है आज पत्थर से
वही संगीत सरिता और नालों से
राागिनी उर में सुखद मद
भाव भरती जा रही है!
आज मेरे लोचनों में
नींद घिरती आ रही है!

बन्द पलकों के हुए पट, पर
दिखाई दे रहा यह, पी रहा हूँ मैं,
नव पयोधर से किसी का दूध
शीतल, भान भी है यह, कहाँ हूँ मैं,
स्वस्थ मांसल देह-छाया
झूम गिरती आ रही है!
आज मेरे लोचनों में
नींद घिरती आ रही है!

१९४९

पूनम

पीपल के पीछे से चुपचुप
झाँक रहा चंदा पूनम का!

इतना भोला है कि उसे यह
ज्ञात न, कोई देख रहा है,
चारों ओर नई आभा से
पूरित शीतल सिंधु बहा है,
दूर क्षितिज पर शंकाकुल मुख
गोरा-गोरा शशि का दमका!
पीपल के पीछे से चुपचुप
झाँक रहा चंदा पूनम का!

इतना व्याकुल है कि अभी से
खोल द्वार नभ के, भरमाया,
काली रात न होने भी दी
सबके सम्मुख बाहर आया,
और न जाने रोक रहा क्यों
गिरने वाला परदा तम का!
पीपल के पीछे से चुपचुप
झाँक रहा चंदा पूनम का!

१६४६

३२

शशि पर घूँघट बादल का है!

घूँघट इतना झीना जिसमें
है शरमाया मुख प्रतिबिम्बित,
दो पागल कजरारी अँखियाँ
संधान किए नभ पर अंकित,

सीमित रह न सका किंचित भी
उभर-उभर मधु-घट छलका है!
शशि पर घूँघट बादल का है!

इतना छलका कि सितारों-से
छींटे उड़-उड़ कर फैल गए,
मानों उर से बाहर होकर
बिखरे हों अगणित भाव नए,

या स्वर्ण-अलंकृत छोर गगन
में फहराते आँचल का है!
शशि पर घूँघट बादल का है!

३३

ओ राकापति ! देख तुम्हें सब
रूप गर्विताएँ लज्जित हैं !

सौन्दर्य सभी का फीका-सा
लगता है जब तुम आते हो,
अपनी शीतल नव-चाँदी-सी
आभा ले नभ में छाते हो,
जाने कितना स्वर्गिक-वैभव
अंगों में, उर में संचित है !
ओ राकापति ! देख तुम्हें सब
रूप गर्विताएँ लज्जित हैं !

केवल मुसकान-किरन पर ही
जग का सब वैभव न्यौछावर,
बलिहारी जाता है कवि का
तन-मन, ओ नभवासी सुंदर !
देख तुम्हें जग के कन-कन का
अंतर - आनंद असीमित है !
ओ राकापति ! देख तुम्हें सब
रूप-गर्विताएँ लज्जित हैं !

३४

हिमकर से ग्राँख चुराना बड़ा कठिन !

यह जब ग्रपनी नव-ग्राभा को
सूने नभ में फैलाता है,
तब भावुक ग्रंतर का सागर
सुख-लहरों से भर जाता है,
पर, पल भर भी
हिमकर को पास बुलाना बड़ा कठिन !
हिमकर से ग्राँख चुराना बड़ा कठिन !

चंचल ग्रँखियाँ जब निंदिया के
पलने पर चढ़ सो जाती हैं,
जब क्षण भर में तन-मन की धन -
राशि पराई हो जाती है,
तब भी, सचमुच
हिमकर की याद भुलाना बड़ा कठिन !
हिमकर से ग्राँख चुराना बड़ा कठिन !

१९५०

३५

रे मूक कलानिधि के मुख पर
मोहक सपनों की छाया है !

दिन में सोता है
निशि भर जगता है,
जिससे अलसाया खोया-खोया-सा
हरदम लगता है,
पहचान नहीं पाओगे तुम
कुछ अद्भुत स्वर्गिक माया है !
रे मूक कलानिधि के मुख पर
मोहक सपनों की छाया है !

पहले बढ़ता, पर
फिर घट जाता है,
जिससे पल-भर भी यह नहीं किसी के
वश में आता है,
समझें क्या ? यह अस्सी घाटों
का पानो पीकर आया है !
रे मूक कलानिधि के मुख पर
मोहक सपनों की छाया है !

१९५०

३६

आज है बेचैन मन
कुछ बात करने को प्रिये !

एकरस इतनी विलंबित
मौनता अब हो रही है भार,
जब सतत लहरा रहा शीतल
रुपहला स्निग्ध पारावार,

हो रहा बेचैन मन
उन्मुक्त मिलने को प्रिये !
आज है बेचैन मन
कुछ बात करने को प्रिये !

शुष्क नीरस सृष्टि में जब
छा गए चारों तरफ नव बौर,
भाग्य में मेरे अरे केवल
लिखा है क्या अकेला ठौर ?

हो रहा बेचैन मन
कुछ भेद कहने को प्रिये !
आज है बेचैन मन
कुछ बात करने को प्रिये !

१९५०

३७

मेरा चाँद मुझसे दूर है!

सूने व्योम में
रोती अकेली रात है,
चारों ओर से
ग़म की लगी बरसात है,
इसलिए ही आज
निष्प्रभ हर कुमुद का नूर है!
मेरा चाँद मुझसे दूर है!

किस एकांत में
जाकर तड़पता है सरल,
भय है प्राण को
भारी, न पीले रे गरल,
क्योंकि ऊँचे भव्य
घर में क़ैद है, मजबूर है!
मेरा चांद मुझसे दूर है!

ये आँखें क्षितिज
पर आश से, विश्वास से
निश्चल देखतीं
हर रश्मि को उल्लास से,
क्योंकि यह है सत्य—
उसमें चाह मिलन ज़रूर है!
मेरा चाँद मुझसे दूर है!

अमावस की अँधेरी में

३८

नभ के किन परदों के पीछे आज छिपा है चाँद ?

मैं पूछ रहा हूँ तुमसे ओ
नीरव जलने वाले तारो !
मैं पूछ रहा हूँ तुमसे ओ
अविरल बहने वाली धारो !
सागर की किस गहराई में आज छिपा है चाँद ?

मैं पूछ रहा हूँ तुमसे ओ
मन्थर मुक्त हवा के झोंको !
जिसने चाँद चुराया मेरा
उसको सत्वर भगकर रोको !
नयनों से दूर बहुत जाकर आज छिपा है चाँद ?

मैं पूछ रहा हूँ तुमसे ओ
तरुओ ! पहरेदार हज़ारों,
चुपचाप खड़े हो क्यों ? अपने
पूरे स्वर से नाम पुकारो !
दूर कहीं मेरी दुनिया से आज छिपा है चाँद !

१९४९

३६

जिन्दगी की राह पर कुछ दो क्षणों को
मिल गए थे हम,
एकरसता मौनता का बोझ भारी
हो गया था कम!

उड़ गया छाया थकावट का उदासी
का धुआँ गहरा,
पा तुम्हें मन - प्राण मरुथल पर उठी थी
रस लहर लहरा!

पर, बनी मंजिल मनुज की क्या कभी भी—
राह जीवन की?
क्या सदा को छा सकीं नभ मे घटाएँ
सुखद सावन की?

आज जाना है विरल बहुमूल्य कितनी
प्यार की घड़ियाँ,
गूँजती हैं आज भी रह-रह तुम्हारे
गीत की कड़ियाँ!

१९५७

४०

आज मेरे सरल चाँद को किस
ग्रहण ने ग्रसा है ?
आज कैसी विपद में विहंगम
गगन का फँसा है ?

मौन वातावरण में बिखरतीं
उदासीन किरणें,
रंग बदला कि मानों उठी हो
घटा घोर घिरने !

दूर का यह अँधेरा सघन अब
निकट आ रहा है,
गीत दुख का, बड़ी वेदना का
पवन गा रहा है !

अश्रु से भर खड़े मूक बनकर
सभी तो सितारे,
हो व्यथित यह सतत सोचते हैं
कि किसको पुकारें ?

साथ हूँ मैं सुधाधर तुम्हारे
मुझे दुख बताओ,
हूँ तुम्हारा, रहूँगा तुम्हारा
न कुछ भी छिपाओ !

विवशता

४१

दूर गगन से देख रहा शशि !

जगते-जगते बीत गई है
आधी रात,
पर, पूरी हो न सकी अस्फुट
मन की बात,
भरे नयन से देख रहा शशि !
दूर गगन से देख रहा शशि !

ऊपर से तो शांत दिखाई
देते प्राण,
पर, भीतर कैद बड़ा यौवन
का तूफान,
विरह - जलन से देख रहा शशि !
दूर गगन से देख रहा शशि !

सारे नभ में बिखरी पड़ती
है मुसकान,
पर, कितना लाचार अधूरा
है अरमान,
बोझिल तन से देख रहा शशि !
दूर गगन से देख रहा शशि !

१९५१

ओ चाँद !

४२

ओ चाँद सलोने ! अम्बर से
क्या कभी न नीचे उतरोगे ?

बंद करो उन्मत्त ! चकोरी
का और चुराना भोला मन,
दूर करो नभ के जादूगर !
मचली लहरों का पागलपन,
शांत करो जिज्ञासा कवि के
उर में बढ़ने वाली प्रतिक्षण,

ओ चाँद अनोखे ! जीवन का
चुप - चुप कब भेद बताओगे ?
ओ चाँद सलोने ! अम्बर से
क्या कभी न नीचे उतरोगे ?

शायद न मिटेगी युग - युग तक
यह दिन - दिन बढ़ती सुन्दरता,
शायद न मिटेगी युग - युग तक
यह निज चरणों की निर्भरता,
शायद न मिटेगी युग - युग तक
यौवन की अल्हड़ चंचलता,

ओ चाँद अकेले! बाहों में
क्या कभी मुझे भी भर लोगे?
ओ चाँद सलोने! अम्बर से
क्या कभी न नीचे उतरोगे?

१९५१

जितने पास आता हूँ तुम्हारे इंदु
उतने ही सँभल तुम दूर जाते हो !

पहले ही बतादो ना
पहुँचने क्या नहीं दोगे ?
पहले ही अरे कहदो
कि मेरा प्यार ना लोगे !

जितना चाहता हूँ ओ ! तुम्हें राकेश
उतने ही बदल तुम दूर जाते हो !
जितने पास आता हूँ तुम्हारे इंदु
उतने ही सँभल तुम दूर जाते हो !

आओगे न क्या मेरे
कभी एकांत जीवन में ?
क्या अच्छा नहीं लगता
विहँसना स्नेह-बंधन में ?

जितना चाहता हूँ बाँधना ओ सोम !
उतने बन विकल तुम दूर जाते हो !
जितने पास आता हूँ तुम्हारे इंदु
उतने ही सँभल तुम दूर जाते हो !

ऊपर से खड़े होकर
निरंतर देखते क्यों हो ?
किरणें रेशमी अपनी
सँजो कर फेंकते क्यों हो ?

जैसे ही अकिंचन में उलझता भूल
वैसे ही सरल ! तुम दूर जाते हो !
जितने पास आता हूँ तुम्हारे इंदु
उतने ही सँभल तुम दूर जाते हो !

१९५१

४४

चाँद से जो प्यार करता है—
वह अकेला ज़िन्दगी भर आह भरता है !

ऐसा नहीं होता अगर,
तो क्यों कहा जाता कलंकित रे ?
मधुकर सरीखा उर, तभी
तो कर न सकता स्नेह सीमित रे !

चाँद से जो प्यार करता है—
नष्ट वह अपना मधुर संसार करता है !
वह अकेला ज़िन्दगी भर आह भरता है !

ऐसा नहीं होता अगर,
तो दूर क्यों इंसान से रहता ?
नीरस हृदय है; इसलिए
ना बात मीठी भूलकर कहता,

चाँद से जो प्यार करता है—
कंटकों को जानकर गलहार करता है !
वह अकेला ज़िन्दगी भर आह भरता है !

१९५२

चाँद और पत्थर [१]

४५

चांद तुम पत्थर - हृदय हो !

व्यर्थ तुमसे प्यार करना,
व्यर्थ है मनुहार करना,
व्यर्थं जीवन की सुकोमल भावनाओं को जगाना ,
जब न तुम किंचित सदय हो !
चांद तुम पत्थर हृदय हो !

व्यर्थं तुमसे बात करना,
और काली रात करना,
प्राणघाती, छल भरा, झूठा तुम्हारा स्नेह बन्धन ;
चाहते अपनी विजय हो !
चांद तुम पत्थर हृदय हो !

फेंक कर सित डोर गुमसुम,
देखते इस ओर क्या तुम?
स्वर्ग के सम्राट्, नभ-स्वच्छन्द-वासी! रे तुम्हें क्या?
सृष्टि हो चाहे प्रलय हो!
चाँद तुम पत्थर हृदय हो!

सत्य आकर्षण नहीं है,
सत्य मधु-वर्षण नहीं है,
सत्य शीतल रुपहली मुसकान अधरों की नहीं है!
तुम स्वयं में आज लय हो!
चाँद तुम पत्थर हृदय हो!

१९५२

चाँद और पत्थर [२]

४६

चाँद तुम पत्थर नहीं हो!

है तुम्हारा भी हृदय कोमल,
स्नेह उमड़ा जा रहा छल छल,
हो बड़े भावुक, बड़े चंचल,

इसलिए मेरे निकट हो,
प्राण से बाहर नहीं हो!
चाँद तुम पत्थर नहीं हो!

राह अपनी चल रहे हो तुम,
आँधियों में पल रहे हो तुम,
शीत में हँस गल रहे हो तुम

इसलिए कहना गलत है—
'तुम मनुज-सहचर नहीं हो!'
चाँद तुम पत्थर नहीं हो!

हो किसी के प्यार बन्धन में,
हो किसी की आश जीवन में,
गीत के स्वर हो किसी मन में,

सोच इतना ही मुझे है—
हाय, धरती पर नहीं हो!
चाँद तुम पत्थर नहीं हो!

१९५३

न जाने क्यों...........

४७

मुझे मालूम है यह चाँद मुझको मिल नहीं सकता,
कभी भी भूलकर स्वर्गिक-महल से हिल नहीं सकता,
चरण इसके सदा आकाशगामी हैं,
रुपहले - लोक का यह मात्र हामी है,
न जाने क्यों उसे फिर भी हृदय से प्यार करता हूँ !
न जाने क्यों उसी की याद बारंबार करता हूँ !

मूझे मालूम है यह चाँद बाहों में न आएगा,
कभी भी भूलकर मुझको न प्राणों में समाएगा,
अमर है कल्पना का लोक रे इसका,
नहीं पाना किसी के हाथ के वस का,
न जाने क्यों उसी पर व्यर्थ का अधिकार करता हूँ!
न जाने क्यों उसे फिर भी हृदय से प्यार करता हूँ!

मुझे मालूम है यह चाँद कैसे भी न बोलेगा,
कभी भी भूलकर अपने न मन की गाँठ खोलेगा,
सरल इसके सुनयनों की न भाषा है,
समझने में निराशा ही निराशा है,
न जाने क्यों उसी से भावना-व्यापार करता हूँ!
न जाने क्यों उसे फिर भी हृदय से प्यार करता हूँ!

मुझे मालूम है यह चाँद वैभव का पुजारी है,
बड़ी मनहर गुलाबी स्वप्न दुनिया का विहारी है,
व मेरे पंथ पर काँटे बिछे अगणित,
अभावों की हवाएँ आ गरजती नित,
न जाने क्यों उसी से राह का शृंगार करता हूँ!
न जाने क्यों उसे फिर भी हृदय से प्यार करता हूँ!

१९५३

४८

प्राणों में प्रिय! आज समाया
अभिराम तुम्हारा आकर्षण!

जो कभी न मिटने पाएगा,
जो कभी न घटने पाएगा,
तीव्र प्रलोभन के भी सम्मुख
जो कभी न हटने पाएगा,
शाश्वत केवल यह, जगती में
मनहर प्राण! तुम्हारा बंधन!
प्राणों में प्रिय! आज समाया
अभिराम तुम्हारा आकर्षण!

यदि भरलूँ मुसकान तुम्हारी,
और चुरा लूँ आभा प्यारी,
तो निश्चय ही बन जाएगी
मेरी दुनिया जग से न्यारी,
तुमने ही आज किया मेरा
जगमग सूना जीवन-आँगन!
प्राणों में प्रिय! आज समाया
अभिराम तुम्हारा आकर्षण!

अनुराग तुम्हारा झर-झर कर
जाए न कभी मुझसे बाहर,
साथ तुम्हारे रहने के दिन
सच, याद रहेंगे जीवन भर,
स्नेह भरे उर से करता हूँ
मैं सतत तुम्हारा अभिनन्दन!
प्राणों में प्रिय! आज समाया
अभिराम तुम्हारा आकर्षण!

१९५४

४६

कभी क्या चाँद का भी साथ छूटा है ?

रहेंगे हम जहाँ जाकर
वहाँ यह चाँद भी होगा,
हमारे प्राण का जीवित
वहाँ उन्माद भी होगा,

बताओ तो किसी ने आजतक क्या
चाँदनी का रूप लूटा है ?
कभी क्या चाँद का भी साथ छूटा है ?

हमारे साथ यह सुख के
दिनों में मुसकराएगा,
दुखी यह देखकर हमको
पिघल आँसू बहाएगा,

बिछुड़कर दूर रहने से कभी भी
प्यार का बंधन न टूटा है!
कभी क्या चाँद का भी साथ छूटा है?

हमारी नींद में आ यह
मधुर सपने सजाएगा,
थके तन पर बड़े शीतल
पवन से थपथपाएगा,

निरंतर एक गति से ही बहेगा
स्नेह का जब स्रोत फूटा है!
कभी क्या चाँद का भी साथ छूटा है?

१९५३

चाँद, मेरे प्यार !

५०

ओ चाँद !
तुमको देखकर
बरबस न जाने क्यों
किसी मासूम मुखड़े की
बड़ी ही याद आती है !
फिर यह बात मन में बैठ जाती है
कि शायद तुम वही हो
चाँद, मेरे प्यार !
यह वही मुख है
जिसे मैंने हजारों बार चूमा है
कभी हलके,
कभी मदहोश 'आदम' की तरह !
यह वही मुख है
हजारों बार मेरे सामने जो मुसकराया है,
कभी बेहद लजाया है !

हुआ क्या आज यदि
मेरी पहुँच से दूर हो,
मुख पर तुम्हारे अजनवी छाया
चिढ़ाने का नवीन सरूर हो ;
जैसे कि फिर तो पास आना ही नहीं !

क्या कह रहे हो ?
ज़ोर से बोलो—
'कि पहचाना नहीं !'
हुश !
प्यार के नखरे न ये अच्छे तुम्हारे ,
अब पकड़ना ही पड़ेगा
पहुँच किरणों के सहारे ,
देखता हूँ और कितनी दूर भागोगे ,
मुझे मालूम है जी,
तुम बिना इसके न मानोगे !

१९५५

दुराव

५१

चाँद को छिप - छिप झरोखों से सदा देखा किया
और अपनी इस तरह आँखें चुराई चाँद से !

चाँद को झूठे सँदेसे लिख सदा भेजा किया
और दिल की इस तरह बातें छिपाई चाँद से !

चाँद को देखा तभी मैं मुसकराया जानकर
और उर का यों दबाया दर्द अपना चाँद से !

लाख कोशिश की मगर मैं चाँद को समझा नहीं
और पल भर कह न पाया स्वर्ण - सपना चाँद से

भूल करता ही गया अच्छा - बुरा सोचा नहीं
प्यार कर बैठा किसी के, चिर - धरोहर, चाँद से !

युग गुज़रते जा रहे खामोश, मैं भी मौन हूँ ;
क्योंकि अब बातें करूँ किस आसरे पर चाँद से !

१९५४

५२

यह न समझो कूल मुझको मिल गया
आज भी जीवन - सरित मँझधार में हूँ !

प्यार मुझको धार से
धार के हर वार से,
प्यार है बजते हुए
हर लहर के तार से,

यह न समझो घर सुरक्षित मिल गया
आज भी उघरे हुए संसार में हूँ !

यह न समझो कूल मुझको मिल गया
आज भी जीवन - सरित मँझधार में हूँ !

प्यार भूले गान से,
प्यार हत अरमान से,
ज़िन्दगी में हर क़दम
हर नए तूफ़ान से,

यह न समझो इंद्र - उपवन मिल गया
आज भी वीरान में, पतझार में हूँ !

यह न समझो कूल मुझको मिल गया
आज भी जीवन - सरित मँझधार में हूँ !

खोजता हूँ नव - किरन
रुपहला जगमग गगन ,
चाहता हूँ देखना
एक प्यारा - सा सपन ,

यह न समझो चाँद मुझको मिल गया
आज भी चारों तरफ़ अँधियार में हूँ !

यह न समझो कूल मुझको मिल गया
आज भी जीवन - सरित मँझधार में हूँ !

१९५५

५३

तुमसे मिलना तो अब दूभर !

मूक प्रतीक्षा में कितने युग बीत गये,
चिर प्यासी आँखों के बादल रीत गये,
एकाकी जीवन के निर्जन
पथ पर केवल पतझर-पतझर !
तुमसे मिलना तो अब दूभर !

देख रहा हूँ, सभी अपरिचित और नये,
वे जाने-पहचाने सपने कहाँ गये ?
ढूँढ चुका अविराम सजग
कोना-कोना जल थल अम्बर !
तुमसे मिलना तो अब दूभर !

५४

तुम इतनी पागल नहीं बनो !

जिसको समझ रही हो प्रतिपल
सरल - तरल भावों का निर्झर,
वह बोझिल दर्द भरा वंचित
चिर एकाकी सूना ऊसर,
अपने मन को वश में रक्खो
यों इतनी दुर्बल नहीं बनो !
तुम इतनी पागल नहीं बनो !

क्यों बड़ी लगन से देख रहीं—
यह पत्थर है, मोम नहीं है,
अरी चकोरी ! सुबह - सुबह का
सूरज है, यह सोम नहीं है,
यों किसी अपरिचित के सम्मुख
तुम इतनी निश्छल नहीं बनो !
तुम इतनी पागल नहीं बनो !

यह मेघ नहीं सुखकर शीतल
केवल उष्ण धुँए का बादल,
इसमें नादान अरे! रह-रह
खोजो मत जीवन का संबल,
सब मृग-जल है, इसके पीछे
तुम इतनी चंचल नहीं बनो!
तुम इतनी पागल नहीं बनो!

बड़े जतन से सजा रही हो
तुम जिस उजड़ी फुलवारी को,
कैसे लहराए वह, समझो
तनिक हृदय की लाचारी को,
अश्रु-भरी आँखों में बसकर
शोभा का काजल नहीं बनो!
तुम इतनी पागल नहीं बनो!

१९५६

प्रेय

५५

प्यार की जिसको मिली सौगात है
ज़िन्दगी उसकी सजी बारात है
भाग्यशाली वह; उसी के ही लिये
सृष्टि में मधुमास है, बरसात है!

१९५५